पाठ 10

एक अद्भुत अपूर्व स्वप्न

—भारतेन्दु हरिश्चन्द्र

1. आज रात्रि को पर्यंक पर जाते ही अचानक आँख लग गई। सोते में सोचता क्या हूँ कि इस चलायमान शरीर का कुछ ठिकाना नहीं। इस संसार में नाम स्थिर रखने की कोई युक्ति निकल आवे तो अच्छा है, क्योंकि यहाँ की रीति देख मुझे तो विश्वास होता है कि इस चपल जीवन का क्षण-भर का भरोसा नहीं। ऐसा कहा भी है—

स्वाँस स्वाँस पर हरि भजो वृथा स्वाँस मत खोय।
न जाने या स्वाँस को आवन होय न होय

देखो समय सागर में एक दिन सब संसार अवश्य मग्न हो जायेगा। कालवश शशि सूर्य भी नष्ट हो जायेंगे। आकाश के तारे भी कुछ काल पीछे दृष्टि न आवेंगे। केवल कीर्ति-कमल संसार-सरोवर में रहे वा न रहे, और सब तो एक तप्त तवे की बूँद हुए बैठे हैं।

(पृष्ठ सं. ...)

शब्दार्थ—पर्यंक = पलंग। आँख लग जाना = नींद आ जाना। चलायमान = नाशवान। युक्ति = उपाय। चपल = चंचल। भरोसा = विश्वास। वृथा = बेकार। मग्न = विलीन। कालवश = समय के प्रभाव से। कीर्ति = यश। तप्त तवे की बूँद = क्षणभंगुर, गर्म तवे पर पड़ी पानी की बूँद।

सन्दर्भ तथा प्रसंग—प्रस्तुत गद्यांश हमारी पाठ्यपुस्तक के 'एक अद्भुत अपूर्व स्वप्न' शीर्षक पाठ से लिया गया है। इसके लेखक भारतेन्दु हरिश्चन्द्र हैं। लेखक ने एक रात एक विचित्र सपना देखा कि कोई काम करना चाहिए क्योंकि संसार में सब कुछ नश्वर है और जीवन भी स्थायी नहीं है।

व्याख्या—लेखक कहता है कि एक रात वह जैसे ही पलंग पर आकर लेटा, उसे नींद आ गई। नींद की दशा में उसने विचार किया कि संसार में जीवन स्थायी नहीं है। वह कभी भी नष्ट हो सकता है। मरने के बाद भी लोग उसे याद रखें इसका कोई उपाय पता चल जाय तो अच्छा है। संसार के तौर-तरीके देखकर लेखक को पक्का विश्वास हो गया है कि जीवन चंचल और अस्थिर है। उसके स्थायित्व का एक क्षण भी विश्वास नहीं किया जा सकता। किसी कवि का यह कथन सच है कि हर बार श्वास लेते समय ईश्वर का स्मरण करना चाहिए। एक भी श्वांस बेकार नहीं जाने देनी चाहिए। यह नहीं पता कि एक श्वास आने के पश्चात हमारी श्वांस ...

सबकुछ डूबकर नष्ट हो जायेगा। समय आने पर चन्द्रमा और सूर्य भी मिट जायेंगे। कुछ समय बाद आकाश में तारे नहीं देंगे। मनुष्य के यश का कमल-पुष्प भी शेष रहेगा अथवा नहीं, यह भी पता नहीं है। जिस प्रकार गरम तवे पर बूँद गिरते ही नष्ट हो जाती है और क्षणभर में ही भाप बनकर उड़ जाती है, उसी प्रकार संसार में प्रत्येक वस्तु अस्थायी एक दिन हर वस्तु नष्ट हो जाती है।

विशेष—1. भारतेन्दु जी ने संसार की नश्वरता का वर्णन करते हुए बताया है कि मनुष्य चाहता है कि मृत्यु के पश्चात नाम याद रखें। इसके लिए वह कुछ स्मरणीय काम करना चाहता है। 2. इन पंक्तियों में संसार की रीति-नीति पर किया गया है। 3. भाषा सरल, प्रवाहपूर्ण खड़ी बोली है तथा शैली व्यंग्यात्मक है।

2. इस हेतु बहुत काल तक सोच समझ प्रथम यह विचार किया कि कोई देवालय बनाकर छोड़ जाऊँ, परन्तु थोड़ी ही में आ गया कि इन दिनों की सभ्यता के अनुसार इससे बड़ी कोई मूर्खता नहीं, और यह तो मुझे भली भाँति मालूम अंग्रेजी शिक्षा रही तो मन्दिर की ओर मुख फेर कर भी कोई नहीं देखेगा। इस कारण विचार का परित्याग करना पड़े-पड़े पुस्तक रचने की सूझी। परन्तु इस विचार में बड़े काँटे निकले क्योंकि बनाने की देर न होगी कि कीट काटकर आधी से अधिक निगल जायेंगे। यश के स्थान पर शुद्ध अपयश प्राप्त होगा। (पृष्ठ सं. 35)

शब्दार्थ—देवालय = मंदिर। परित्याग करना = छोड़ना। काँटे = बाधाएँ। कीट = कीड़ा। क्रिटिक = आलोचक।

सन्दर्भ तथा प्रसंग—प्रस्तुत गद्यांश हमारी पाठ्यपुस्तक में संकलित 'एक अद्भुत अपूर्व स्वप्न' शीर्षक पाठ से है। इसके लेखक हिन्दी गद्य के जनक भारतेन्दु हरिश्चन्द्र हैं। लेखक ने एक विचित्र सपना देखा उसने देखा कि इस संसार कुछ नश्वर है। जीवन का भरोसा नहीं। कोई ऐसा उपाय हो जिससे मृत्यु के पश्चात लोग उसका नाम याद रखें।

व्याख्या—लेखक ने स्वप्न में ही विचार किया कि संसार में नाम स्थिर रखने की कोई युक्ति सोची जाय। इसके लिए समय तक सोचने के बाद उसके मन में पहली बार यह विचार आया कि वह कोई मन्दिर बनाकर छोड़ दे। मन्दिर को लोग उसको बनाने वाले के बारे में सोचेंगे। थोड़े समय तक सोचने के बाद उसको मन्दिर बनवाने का विचार ठीक नहीं सोचा कि अंग्रेजी शिक्षा का चारों ओर प्रसार हो रहा है। भारतीय सभ्यता इससे प्रभावित होती जा रही है। अंग्रेजी चलती रही तो कोई व्यक्ति मन्दिर की तरफ देखेगा भी नहीं। आखिरकार उसे मन्दिर बनाने का विचार मूर्खतापूर्ण लगा। मन्दिर बनवाने का विचार छोड़ दिया। फिर उसने सोचा कि किसी पुस्तक की रचना की जाय। परन्तु यह विचार भी उसको लगा। उसने सोचा कि पुस्तक तैयार होने पर अनेक आलोचक उसमें दोष ढूँढ़ेंगे, जिस प्रकार कीड़ा किसी वस्तु को काट है उसी प्रकार आलोचक पुस्तक में कमियाँ बताकर उसे पाठकों में अलोकप्रिय बना देंगे। इस प्रकार लेखक को पुस्तक पर यश के स्थान पर अपयश ही प्राप्त होगा।

विशेष—1. लेखक की भाषा सरल, बोधगम्य तथा विषयानुकूल है। 2. शैली व्यंग्य-विनोदपूर्ण है। 3. अपनी मृत्यु के नाम अमर रखने की इच्छा पर व्यंग्य किया गया है। 4. स्वप्न की दशा में ही लेखक ने विचार किया है।

3. स्वप्न ही में प्रभात होते ही पाठशाला बनाने का विचार दृढ़ किया। परन्तु जब थैली में हाथ डाला तो केवल ग्यारह मुहरें निकलीं। आप जानते हैं इतने में मेरी अपूर्व पाठशाला का एक कोना भी नहीं बन सकता था। निदान अपने इष्ट की भी सहायता लेनी पड़ी। ईश्वर को कोटि धन्यवाद देता हूँ जिसने हमारी ऐसी सुनी। यदि ईंटों के ठोर मुहर चुनवा लेते तो दस पाँच रेल रुपये और खर्च पड़ते। होते-होते सब हरि कृपा से बन कर ठीक हुआ। इसमें व्यय हुआ वह तो मुझे नहीं है, परन्तु इतना अपने मुन्शी से मैंने सुना था कि एक का अंक और तीन सौ सत्तासी शून्य अकेले पानी में पड़े थे। (पृष्ठ सं. 35)

शब्दार्थ—मोहरें = रुपये, सिक्के। निदान = परिणामस्वरूप। कोटि = करोड़। ठोर = स्थान। पानी में पड़ना = खर्च

में संकलित 'एक अद्भुत अपूर्व स्वप्न' शीर्षक पाठ से

ऐसी युक्ति सोच रहा था जिससे संसार में उसका नाम स्थिर रहे। मन्दिर बनवाने और पुस्तक लिखने के विचार उसको प्रतीत नहीं हुए। अन्त में एक मित्र की सहायता से उसे एक विचार में उपयुक्तता का आभास हुआ।

व्याख्या—लेखक ने सपने में यह विचार पक्का मान लिया कि सवेरा होते ही वह एक पाठशाला का निर्माण करा उसने अपने संग्रहीत धन के बारे में पता किया तो पाया कि उसके पास बहुत कम धन था। इतने कम धन में पाठशाला का भाग भी नहीं बन सकता था। परिणामस्वरूप उसको अपने प्रियजनों और मित्रों से सहायता माँगनी पड़ी। ईश्वर की कृपा मित्रों की अपूर्व सहायता से इतनी धनराशि प्राप्त हुई कि यदि वह ईंटों के स्थान पर सिक्कों से भवन बनवाता तब भी कुछ अधिक रुपये ही खर्च होते। ईश्वर की दया से सब काम ठीक तरह से पूरा हुआ। पाठशाला बनवाने में कितना धन खर्च हुआ यह लेखक को नहीं पता परन्तु उसको मुंशी से पता चला कि इस काम में एक के अंक को बाद तीन सौ सत्तासी शून्य अगणित धन व्यय हुआ था।

विशेष—1. लेखक ने मित्रों की सहायता से पाठशाला बनवाई जिसमें अगणित धन व्यय हुआ। 2. भाषा सरल तथा बोधगम्य है। 3. शैली व्यंग्यपूर्ण है।

4. हम अपने इष्ट मित्रों की सहायता को भी न भूलेंगे कि जिनकी कृपा से इतना द्रव्य हाथ आया कि पाठशाला का सब खर्च चल गया और दस पाँच पीढ़ी तक हमारी सन्तान के लिए बच रहा। हमारे पुत्र, परिवार के लोग चैन से हाथ पर हाथ धरे बैठे रहे। हे सज्जनो, यह तुम्हारी कृपा का विस्तार है कि तन मन से आप इस धर्म-कार्य में प्रवृत्त हुए, नहीं मैं दो हाथ पैर का बेचारा मनुष्य आपके आगे कौन कीड़ा था जो ऐसे दुष्कर कर्म को कर लेता? यहाँ तो घर की केवल मूँछें ही मूँछें थीं।

(पृष्ठ सं. 30)

शब्दार्थ—चैन = आराम। हाथ पर हाथ धरे बैठना = कुछ काम न करना। कृपा का विस्तार = अपार दया। कीड़ा = सामर्थ्य हीन। दुष्कर = कठिन।

सन्दर्भ तथा प्रसंग—प्रस्तुत गद्यांश हमारी पाठ्यपुस्तक में संकलित 'एक अद्भुत अपूर्व स्वप्न' शीर्षक पाठ से उद्धृत है। इसके लेखक भारतेन्दु हरिश्चन्द्र हैं।

लेखक ने एक सपना देखा। वह अपने नाम को संसार में स्थायी बनाना चाहता था। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए उसने एक पाठशाला खोलने का विचार किया। अपने पास धन न होने पर उसने अपने मित्रों से सहायता माँगी। मित्रों ने जी खोलकर सहायता प्रदान की।

व्याख्या—लेखक कहता है कि पाठशाला बनाने के लिए प्रियजनों तथा मित्रों से जो सहायता प्राप्त हुई, उसको वह कभी भी भुला न सकेगा। उनकी कृपा से इतना अधिक धन प्राप्त हुआ कि पाठशाला बनाने में हुए व्यय की पूर्ति हुई ही उसकी संतान और पाँच-दस पीढ़ियों के लिए भी वह बचा रहा। लेखक के पुत्र और परिवार के सदस्यों को कोई काम नहीं करना पड़ा। वे आराम से रहे और उनकी सभी जरूरतें पूरी हुईं। लेखक उन सभी लोगों का एहसान मानता है जिनकी दया से यह धर्म का काम पूरा हो सका। लेखक तो एक साधारण मनुष्य है। इतने उदार और दानी पुरुषों की तुलना में वह सामर्थ्यहीन ही है। वह ऐसा कठिन काम कर ही नहीं सकता। उसके पास तो कोई साधन ही नहीं था। उसके मन में तो केवल विचार ही विचार थे।

विशेष—1. लेखक ने अपने प्रियजनों तथा मित्रों की दानशीलता का आभार मानकर अपनी सामर्थ्यहीनता को विनम्रतापूर्वक स्वीकार किया है। 2. लेखक चन्दा माँगने वाले स्वार्थी समाज सेवकों का प्रतीक है। 3. समाज सेवा के नाम पर लोगों से धन माँग कर उससे अपना हित साधने तथा समृद्धिशाली बनने वालों पर कठोर व्यंग्य किया गया है। 4. भाषा सरल और सुबोध है। शैली व्यंग्यात्मक है।

5. संसार में पाठशालाएँ अनेक हुई होंगी, परन्तु हरि कृपा से जो सकलपूर्ण कामधेनु यह पाठशाला है वैसी, अचरज नहीं कि आपने इस जन्म में न देखी सुनी हो। होनहार बलवान है, नहीं तो कलिकाल में ऐसी पाठशाला का बनाना कठिन था। देखिए यह हम लोगों के भाग्य का उदय है कि ये महामुनि मुग्धमणि शास्त्री बिना प्रयास हाथ लग गये जिनको सतयुग के आदि में हर अपनी पाठशाला के निमित्त समुद्र और वन जंगलों में खोजता फिरा, अन्त को हार मान बृहस्पति को रखना पड़ा। हम फिर

कि यह हमारे भाग्य की महिमा थी कि ये ही पण्डितराज मृगयाशील श्वान के मुख में शशी के धोखे बद्रिकाश्रम की गुफा में से पड़ गये। इनकी बुद्धि और विद्या की प्रशंसा करने में सरस्वती भी लजाती है। इसमें संदेह नहीं कि इनके थोड़े परिश्रम से पण्डित मूर्ख और अबोध पण्डित हो जायेंगे।

(पृष्ठ सं. 36)

शब्दार्थ—कामधेनु = सभी कामनाओं को पूर्ण करने वाली गाय, जो समुद्र मंथन के समय देवताओं को मिली थी। = भविष्य में होने वाला काम। कलिकाल = कलियुग। प्रयास = प्रयत्न। हाथ लगना = प्राप्त होना। निमित्त = लिए। = देवताओं के गुरु। मृगयाशील = शिकारी। श्वान = कुत्ता। शशी = खरगोश। बद्रिकाश्रम = बद्रीनाथ धाम। = ज्ञान की देवी। अबोध = अज्ञानी।

सन्दर्भ तथा प्रसंग—प्रस्तुत गद्यांश हमारी पाठ्यपुस्तक में संकलित 'एक अद्भुत अपूर्व स्वप्न' शीर्षक पाठ से उद्धृत है। इसके लेखक हिन्दी गद्य के जनक भारतेन्दु हरिश्चन्द्र हैं। लेखक एक रात को देखे गए विचित्र सपने के बारे में बताते हुए कहता है कि उसने अपना नाम इस असार संसार में बनाए रखने के विचार से एक पाठशाला बनवाने का निश्चय किया।

व्याख्या—लेखक ने सपने में एक पाठशाला का निर्माण कराया। संसार में पाठशालाएँ तो अनेक होंगी किन्तु यह अद्भुत थी। ईश्वर की कृपा से बनी यह पाठशाला कामधेनु के समान समस्त कामनाओं को पूरा करने वाली थी। कोई आश्चर्य की बात नहीं कि ऐसी पाठशाला पाठकों ने कभी नहीं देखा होगी अथवा उसके सम्बन्ध में कभी नहीं सुना जो होना होता है, उसे कोई रोक नहीं सकता अन्यथा कलियुग में ऐसी पाठशाला का बनना सरल नहीं था। इस पाठशाला महामुनि मुग्धमणि शास्त्री अनायास प्राप्त हो गए। उनको सतयुग में अपनी पाठशाला में रखने के लिए देवराज इन्द्र उनकी में समुद्र और वनों में भटकते रहे थे। जब वह नहीं मिले तो उन्होंने हारकर वृहस्पति को अपनी पाठशाला में नियुक्त किया सौभाग्य की बात है कि लेखक को यह महामुनि अनायास ही मिल गए। जिस प्रकार शिकार के लिए निकले कुत्ते के कोई खरगोश हो, उसी प्रकार बदरीनाथ धाम की हिमालय की गुफा में रह रहे यह महापण्डित भाग्यवश ही लेखक को हो गए। वह महान बुद्धिमान हैं। विद्या की देवी सरस्वती के वश में भी उनकी बुद्धि और विद्या की प्रशंसा करना नहीं है। बात में संदेह नहीं हो सकता कि इनके प्रयत्न और थोड़े समय के परिश्रम से पण्डित मूर्ख बन जायेंगे और अज्ञानी लोग बन जायेंगे।

विशेष—1. लेखक द्वारा सपने में बनाई गई पाठशाला अपूर्व है। उसमें नियुक्त अध्यापक भी अपूर्व और असाधारण हैं। महामुनि मुग्धमणि शास्त्री पाठशाला में कार्यरत ऐसे ही अद्भुत अध्यापक हैं। 3. पाठशाला तथा उसके शिक्षकों का वर्णन हास्य-विनोदपूर्ण है। 4. भाषा सरल और सुबोध है। शैली व्यंग्यपूर्ण है।

6. इनसे भिन्न, पण्डित प्राणांतकप्रसाद भी प्रशंसनीय पुरुष हैं। जब तक इस घट में प्राण है तब तक न किसी पर इनकी प्रशंसा की गई, न बन पड़ेगी। ये महावैद्य के नाम से इस संसार में विख्यात हैं। चिकित्सा में ऐसे कुशल हैं कि चिता पर चढ़ते-चढ़ते रोगी इनके उपकार का गुण नहीं भूलता। कितना ही रोग से पीड़ित क्यों न हो, क्षण भर में स्वर्ग के सुख को प्राप्त होता है। जब तक औषधि है तो केवल उसी समय तक प्राणी के संसारी विथा लगी रहती है।

(पृष्ठ सं. 37)

शब्दार्थ—घट = शरीर। प्राण = जीवन। औषधि = दवा। विथा = पीड़ा।

सन्दर्भ तथा प्रसंग—प्रस्तुत गद्यांश हमारी पाठ्यपुस्तक में संकलित 'एक अद्भुत अपूर्व स्वप्न' शीर्षक पाठ से उद्धृत है। इसके लेखक प्रसिद्ध गद्यकार भारतेन्दु हरिश्चन्द्र हैं। लेखक ने स्वप्न में एक अनुपम पाठशाला का निर्माण कराया। उसमें अनेक पण्डितों को अध्यापक नियुक्त किया गया। मुग्धमणि शास्त्री तथा पाखण्डप्रिय इस विद्यालय के शिक्षक हैं।

व्याख्या—लेखक कहता है कि पण्डित प्राणान्तक प्रसाद भी इस पाठशाला के प्रशंसनीय शिक्षक हैं। जब तक किसी के शरीर में जीवन है तब तक न तो कोई इनकी प्रशंसा कर सका है और न कोई कर सकेगा। संसार में ये महावैद्य के रूप में प्रसिद्ध हैं। रोगी का इलाज करने में ये अत्यन्त कुशल हैं। चिता पर चढ़ते हुए भी रोगी इनके द्वारा किए गए उपकार को भुला पाता। कोई मनुष्य किसी भी भयानक रोग से पीड़ित क्यों न हो, इनका उपचार आरम्भ होते ही क्षणभर में वह स्वर्गवासी

होने का सुख प्राप्त कर लेता है। जब तक रोगी को इनकी दवा नहीं मिलती, तब तक ही उसको संसार के कष्ट सताते हैं। दवा मिलते ही वह कष्टों से मुक्त होकर स्वर्ग का सुख प्राप्त कर लेता है।

विशेष—1. लेखक की पाठशाला के विद्वान पंडितों में प्राणान्तक प्रसाद भी प्रशंसनीय अध्यापक हैं। 2. लेखक ने प्राणान्तक प्रसाद के रूप में अकुशल डॉक्टर-वैद्यों पर व्यंग्य-प्रहार किया है। 3. भाषा सरल और सुबोध है। शैली व्यंग्य प्रधान है।

7. अब आप सब सज्जनों से यही प्रार्थना है कि आप अपने-अपने लड़कों को भेजें और व्यय आदि की कुछ चिंता न करें, क्योंकि प्रथम तो हम किसी अध्यापक को मासिक देंगे ही नहीं और दिया भी तो अभी दस-पाँच वर्ष पीछे देखा जायेगा। यदि हमको भोजन की श्रद्धा हुई तो भोजन का बन्धान बाँध देंगे, नहीं यह नियत कर देंगे कि जो पाठशाला सम्बन्धी द्रव्य हो उसका वे सब मिलकर नास लिया करें। (पृष्ठ सं. 37)

शब्दार्थ—मासिक = वेतन। बन्धान = प्रबन्ध, निर्धारण। नियत = निश्चित। द्रव्य = धन।

सन्दर्भ तथा प्रसंग—प्रस्तुत गद्यांश हमारी पाठ्यपुस्तक में संकलित 'एक अद्भुत अपूर्व स्वप्न' शीर्षक पाठ से अवतरित है। इसके लेखक भारतेन्दु हरिश्चन्द्र हैं।

लेखक ने स्वप्न में अपना नाम अमर रखने के लिए एक पाठशाला का निर्माण किया। उसमें अनेक विद्वान अध्यापक नियुक्त किए। ऐसी दुर्लभ पाठशाला के बनने पर उसने स्वयं को सौभाग्यशाली माना और लोगों से प्रार्थना की कि वे अपने बच्चों को पाठशाला में पढ़ने भेजें।

व्याख्या—लेखक सभी सत्पुरुषों से प्रार्थना करता है कि वे अपने बालकों को इस अपूर्व दुर्लभ पाठशाला में पढ़ने भेजें। इस पाठशाला में पढ़ने भेजने पर होने वाले खर्च से भयभीत होने की आवश्यकता उनको नहीं है। पाठशाला के अध्यापकों को वेतन दिया ही नहीं जाएगा। फलतः विद्यार्थियों से शुल्क भी नहीं लिया जायगा। यदि वेतन देना आवश्यक हुआ तो दस-पाँच साल बाद इस बारे में विचार किया जाएगा। यदि अध्यापकों को भोजन कराने की श्रद्धा हुई तो भोजन का निर्धारण कर दिया जाएगा। यदि नहीं तो अध्यापकों से कह दिया जाएगा कि वे पाठशाला से सम्बन्धित धन को मिल-बाँट कर उपभोग करें।

विशेष—1. भाषा सरल और सुबोध है। 2. शैली व्यंग्यपूर्ण है। 3. समाज के ऐसे लोगों पर व्यंग्य किया गया है जो विद्यालयों के धन का दुरुपयोग करते हैं तथा भ्रष्टाचार फैलाते हैं।

पाठ्य-पुस्तक के प्रश्नोत्तर

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. भारतेन्दु हरिश्चन्द्र का जन्म स्थान है—

(क) काशी (ख) पटना (ग) जयपुर (घ) जलबपुर

2. 'पर्यंक' का शब्दार्थ है—

(क) पलंग (ख) कुर्सी (ग) पाठशाला (घ) देवालय

उत्तर— 1. (क), 2. (क)।

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्न 3. लेखक के मन में प्रथम क्या विचार आया?

उत्तर—लेखक के मन में प्रथम यह विचार आया कि संसार नाशवान है। इसमें अपने नाम को स्थायी और स्मरणीय बनाने के लिए कोई उपाय करना चाहिए।